“स्मारिका पूर्णाहुति 1995” और “स्मारिका महापूर्णाहुति 2000” में प्रकाशित आदरणीय पंडित लीलापत शर्मा जी के बारे में संक्षेप में जानकारी।

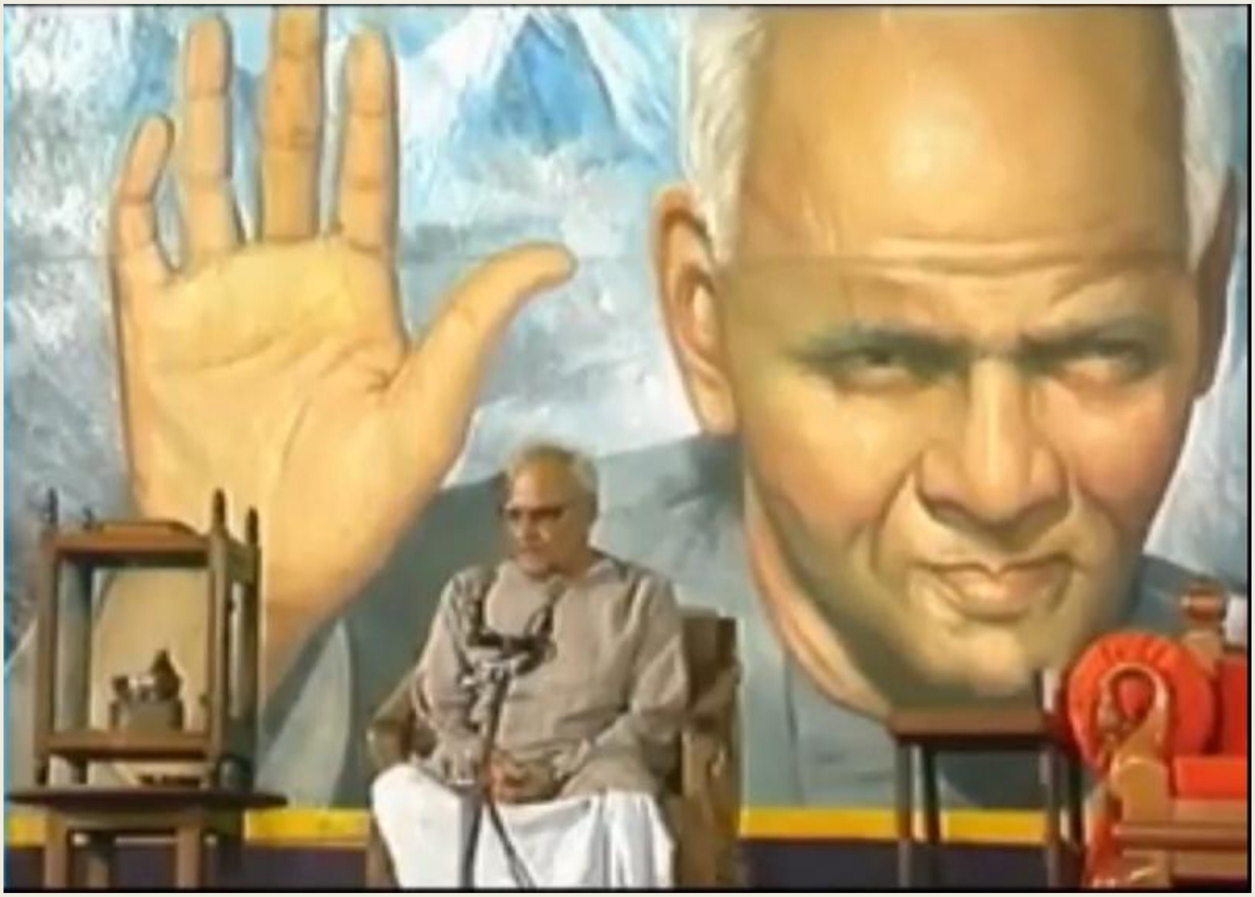

एक निवेदन

इस प्रस्तुति को Compile करने में हमने अपनी तरफ से पूरी सावधानी बरती है,इसके बावजूद यदि कोई त्रुटि रह गयी हो तो उसके लिए हम क्षमाप्रार्थी हैं।

निवेदन करते हैं कि पाठकों को किसी भी समय, कोई भी त्रुटि दिखाई दे,हमें सूचित करने की कृपा करें ताकि हम यथासंभव संशोधन करने का प्रयास का पाएं।

पंडित लीलापत शर्मा जी के बारे में जब भी कोई जानकारी दिखाई देती है तो हमारे कान तो खड़े होते ही हैं लेकिन एकदम उत्तेजना भी   बन जाती है कि इस जानकारी को ऑनलाइन ज्ञानरथ गायत्री परिवार में शेयर किया जाए।

स्मारिका को इंग्लिश में Souvenir कहते हैं, एक ऐसा ग्रन्थ जिसमें समारोह की पूर्ण जानकारी समाहित की गयी होती है।

“स्मारिका पूर्णाहुति 1995” एवं “स्मारिका महापूर्णाहुति 2000” दोनों ही पुस्तकें एक महाग्रंथ जैसी हैं, दोनों ऑनलाइन उपलब्ध हैं। एक-एक शब्द, एक-एक पंक्ति, एक-एक पृष्ठ एवं अनेकों दिव्य चित्र देखने/पढ़ने वाले हैं।

कैसा संयोग है कि परम पूज्य गुरुदेव ने यह दोनों स्मारिकाएँ उस समय हमारे हाथ में थमायी हैं जब हम पंडित जी पर आधारित लेख श्रृंखला का अमृतपान कर रहे हैं। अलग-अलग समय पर प्रकाशित होने के कारण दोनों रचनाओं में अनेकों

संस्मरण रिपीट होने स्वाभाविक हैं। इस प्रस्तुति में भी अखंड ज्योति संस्थान में वंदनीय माता जी के साथ पंडित जी के स्नेह का वर्णन रिपीट हो रहा है जिसे दो बार पढ़ने में अपना ही अलग आनंद है।

"स्मारिका महापूर्णाहुति 2000" के वर्णन में हमने पंडित जी की बहुचर्चित यूट्यूब वीडियो भी अटैच की है, देखने और पढ़ने में जो आनंद प्राप्त हो रहा है उसे शब्दों में वर्णन करना असंभव है।

तो आइए इस पीडीऍफ़ में समाहित ज्ञान के अमृतपान से अपने जीवन को परिष्कृत करें।

166 पृष्ठों की "स्मारिका 1995" के पृष्ठ 10-11 पर पंडित लीलापत शर्मा जी की निम्नलिखित जानकारी प्रस्तुत करने में हम स्वयं को सौभाग्यशाली मानते हैं :

परम वंदनीय माताजी के बाद जिसे पूज्यवर के साथ रहने का सर्वाधिक सौभाग्य प्राप्त हुआ, उनके अलौकिक जीवन के अंतरंग पक्ष को देखने को मिला है, उनमें गायत्री तपोभूमि के व्यवस्थापक, हम सबके श्रद्धेय पंडित लीलापत जी शर्मा प्रमुख हैं। 1995 में

जब यह स्मारिका प्रकाशित हुई थी, उस समय उनकी आयु 80 वर्ष पार कर चुकी थी किन्तु उस आयु में भी उनमें वही जवानी की रवानी थी जो पूज्यवर में देखी जाती थी। उन दिनों पंडित जी अपनी अनुभवी कार्यशैली व पूज्यवर के प्राप्त अनुदान के माध्यम से, मथुरा से साहित्य प्रकाशन एवं विस्तार का समग्र कार्य संचालित कर रहे थे। वे लिखते हैं:

"वंदनीय माताजी और परम पूज्य गुरुदेव हमारे जीवन में माता-पिता की तरह आए। अपनी जननी का स्नेह और वात्सल्य हमें कभी मिला नहीं। वंदनीय माताजी के पास आकर ही यह अनुभव हुआ कि माँ क्या होती है । उनकी और पूज्य गुरुदेव की स्नेह सुधा से ही यह जीवन बना है।"

उन्होंने यह भावपरक उद्गार संपादक मंडल को लिखे पत्र में व्यक्त किए व अपनी अनेकानेक अनुभूतियाँ कृपापूर्वक भेजीं।

इनके कुछ अंश 1995 की स्मारिका में प्रकाशित हुए ताकि कृपालु पाठक स्वयं अनुमान लगा सकें कि आदरणीय पंडित जी की दृष्टि में पूज्यवर की सत्ता

किस रूप में अनुभूत की गयी तथा उन्होंने कैसे-कैसे अनुदान स्वयं पाए।

भरतपुर (राजस्थान) के एक गाँव में जन्में पंडित जी ने नदवई भरतपुर से व्यापार आरंभ कर डबरा में नाम कमाया। जब वे 40 मिलों की मालिकों के एसोशिएसन के अध्यक्ष बने, सब उन्हें एक कुशल व्यापारी के रूप में प्रबंध व्यवस्था बिठाने वाले संगठक के रूप में जानते थे।

पूज्यवर से पंडित जी का पहला परिचय डबरा में ही हुआ । गुरुदेव की सादगी, महानता व आत्मीयतापूर्ण व्यवहार ने पंडित जी को बड़ा प्रभावित किया।

अखण्ड ज्योति के लेखों से प्राप्त ज्ञान से प्रभावित पंडित जी मथुरा पूज्यवर के दर्शनार्थ पहुँचे तो पहली मुलाकात परम वंदनीय माताजी से ही हुई। बात 1957-58 की है। माताजी ने अपने सामने बिठाकर प्यार से भोजन कराया। माँ के प्यार का पहली बार रसास्वादन उन्होंने वहीं घीया मंडी मथुरा स्थित अखण्ड ज्योति संस्थान में किया व सदा के लिए उनके हो गए।

परम पूज्य गुरुदेव से बातें हुईं, तो उन्होंने सहस्र कुण्डीय यज्ञ का माहात्म्य बताया व उसमें महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी सौंपी। उसी यज्ञ में पंडित जी ने पूज्यवर की साक्षात् भगवत सत्ता के रूप में अनुभूति प्राप्त की। पंडित जी ने जब असंभव कार्य भी संपन्न होते देखे तो आत्मीयता, सघनता, समर्पण भाव बढ़ता ही गया और 1967 में अपना सब कुछ छोड़कर, मिल के व्यवस्थापक पद से त्याग पत्र देकर गायत्री तपोभूमि आ गए।

मिशन के एक अग्रज के रूप में प्रतिष्ठित पंडित जी ने लौकिक- आलौकिक ढेरों अनुदान पाए। उन्हें ही गुरुवर की यात्रा में गुरु की सेवकाई का तथा 1980-82 में शक्तिपीठों के उद्घाटन क्रम में उनके साथ चलने का सौभाग्य उन्हें ही प्राप्त हुआ। सही अर्थों में संगठनशीलता के अपने कौशल से आदरणीय पंडित जी ने अपने आराध्य के कृपापात्र बनने में कोई कमी नहीं रखी। पंडित जी के ज्येष्ठ पुत्र राम की असाध्य व्याधि एवं युवावस्था में, उसका एकाएक शरीर छोड़कर चले जाना, पंडित जी के लिए बहुत बड़ी परीक्षा की घड़ी थी। उन्हें लगा कि गुरुदेव का साथ,

समर्पण,गायत्री साधना सब व्यर्थ चली गयी। एक दिन साधना में पूज्यवर ने उनके व्याकुल मन की अन्तर्वाणी को सान्त्वना देते हुए बताया:

"राम तुम्हारी साधना के कारण ही तुम लोगों के साथ इतने समय तक रहा, उसे तो 1971-72 में बहुत पहले ही चले जाना चाहिए था। तुम्हारा लोकसेवा का मार्ग खरा है, उस पर संशय न करो"

जून 1971 में राम की शादी के लिए पूज्य गुरुदेव ने क्यों इतनी बार मना किया था? माताजी ने विशेषाधिकार का प्रयोग कर राम की शादी करवा दी और पूज्य गुरुदेव जैसी अवतारी सत्ता ने अपने बेटे की, पौत्र की आयु बढ़वा दी।

अंत:करण में आवाज गूँजी कि प्रकृति के नियमों को, हार को हम कहाँ तक टालते रहते। पंडित जी का अवसाद मिट गया, अंतःकरण को नयी शक्ति और विश्वास मिला। अपनी बहू के बढ़े हुए मनोबल, स्वाभिमान एवं आत्मावलम्बी बनने की भावना ने उनके मन में नया विश्वास जगा दिया। राम की दोनों बेटियों की शादियाँ परम वंदनीय माताजी के अनुग्रह

से अच्छे घरों में, गायत्री परिजनों के यहाँ हो गयीं तथा बेटे की पढ़ाई का मार्ग भी प्रशस्त हो गया । बहू इंदिरा ने एक समर्पित कार्यकर्त्ता की तरह तपोभूमि में कार्य सँभाल लिया।

इस वज्रपात से गुरु की शक्ति ने ही उन्हें उबारा, नये प्राण दिए और वे अंतिम सांस तक साहित्य विस्तार का इतना महान् कार्य सँभालते रहे। यह सब गुरु शक्ति के बलबूते ही संभव हो सकता है।

****

232 पृष्ठों की "स्मारिका 2000" के पृष्ठ 27-28 पर प्रकाशित आदरणीय पंडित लीलापत शर्मा जी की निम्नलिखित जानकारी प्रस्तुत करने में हम स्वयं को अति सौभाग्यशाली मानते हैं :

उनको शत शत नमन जिन्होंने ज्योति अखंड जलाई

https://youtu.be/k8l48_bkao4

बात लगभग 1955-56 की है। परम पूज्य गुरुदेव से पहला परिचय डबरा (मध्य प्रदेश) में गायत्री महायज्ञ के समय हुआ। स्थानीय कार्यकर्त्ताओं ने मिलकर यज्ञ

का आयोजन किया था। हम उन दिनों डबरा में मिल उद्योग एसोसियेशन के प्रेसीडेण्ट थे। यज्ञ के नाम पर, हमारे आह्वान पर मिल मालिकों ने न केवल सहयोग किया, बल्कि पूज्यवर की अगवानी करने स्टेशन तक भी गए। कल्पना हमारी ही नहीं, सभी की यह थी गुरुदेव कोई भगवा-वेशधारी सन्यासी होंगे। गाड़ी आयी तो साधारण धोती-कुर्ता पहने, साधारण दर्जे के डिब्बे से उतरकर साथ में थोड़ा सा सामान लिये एक भद्र पुरुष दिखाई दिए। ठीक वैसे ही जैसे हमारे घर का कोई व्यक्ति होता है। चेहरे पर मुस्कान, अनन्त शान्ति एवं ऐसा कोई रूप जिसे देखकर कोई भी सम्मोहित हो जाए। हमारे स्थानीय कार्यकर्त्ता श्री जमुना प्रसाद एवं द्वारिका प्रसाद बड़ेरिया ने जब परिचय कराया तब हम जान पाये कि यही आचार्य जी हैं। अखण्ड ज्योति पढ़ी थी, विश्वास नहीं हो रहा था कि सादगी की प्रतिमूर्ति यह श्रीराम शर्मा आचार्य जी होंगे। यज्ञ हुआ उनके प्रवचन सुने, हमने ही नहीं, हमारे अन्य सहकर्मियों ने स्वयं को धन्य महसूस किया कि ऐसा सौभाग्य मिला है। चलते समय “हमारे भावी गुरुदेव” ने हमें मथुरा आने का निमंत्रण दिया।

एक दिन हम बिना सूचना के मथुरा की घीयामंडी के "अखंड ज्योति संस्थान" पहुँच गए। पूज्यश्री, आचार्य जी कहीं कार्यालय से बाहर गए थे। हमें बड़े स्नेह से परम वंदनीय माता जी ने पास बुला लिया व कुशलक्षेम पूछी। बिना किसी परिचय के वे हमारे लिए भोजन ले आयीं व सामने बिठाकर भोजन कराया। हमने तो माँ का प्यार कभी जाना भी नहीं था, औरों से ही माँ की ममता के विषय में सुना था। उस दिन पहली बार अनुभूति हुई कि माँ का प्यार, माँ की ममता क्या होती है। एक तरसते पुत्र को माँ का स्नेह मिला। भोजन पूरा होते-होते गुरुदेव भी आ गए व उन्होंने माताजी से हमारा परिचय कराया कि हम कौन हैं, कहाँ से आए हैं।

उन दिनों मथुरा में नवंबर 1958 में होने वाले सहस्र कुण्डीय महायज्ञ की तैयारी चल रही थी। गुरुदेव ने हमसे आदेश की भाषा में कहा कि तुम्हें समय से पहले सारी व्यवस्था सम्हालने आ जाना है। न करने का कोई प्रश्न ही नहीं था। हम समय से पूर्व ही मथुरा पहुँच गए। अति विशाल आयोजन था । हमें आयोजन का हिसाब किताब रखने की जिम्मेदारी सौंपी गई।

खर्च की भी आज्ञा मिल गई। संभवतः पूज्यवर ने अपनी दिव्यदृष्टि से पात्रता परख ली होगी। खर्च की व्यवस्था तो संभाल ली लेकिन जब अकाउंट्स का रजिस्टर देखा तो कान खड़े हो गये। चिंता होने लगी कि 10 लाख अधिकतम एवं पाँच लाख न्यूनतम की व्यवस्था ऐसे कैसे बनेगी। गुरुदेव से पूछा तो वे हँसकर बोले,

"तुम क्यों चिंता करते हो? जिसने यह आयोजन कराया है वही भगवान इसका प्रबंध भी करेगा।"
सचमुच ऐसा ही हुआ। जितना खर्च होता उससे कुछ थोड़ा ही अधिक तुरन्त आ जाता। सारा आयोजन भव्यता के साथ समाप्त हुआ। इस आयोजन के बाद हमने जाना कि आचार्य जी,मात्र हमारे गुरुदेव, एक व्यक्ति नहीं शक्ति हैं।

एक लेखक के रूप में जिन्हें प्रारंभ में अखंड ज्योति के लेखों से पहचाना था, उनका भगवान स्वरूप समझते ही अंतःकरण के चक्षु खुल गए। अपना सौभाग्य दुनिया का सबसे बड़ा वैभव लगने लगा।

इसके पश्चात गुरुदेव की हिमालय यात्रा संपन्न हुई। हम भी सभी प्रकार के सत्रों-शिविरों में सम्मिलित होने का प्रयास करते रहे। नवरात्रि साधना, पंचकोशी साधना, गीता शिविर, रामायण शिविर, भागवत सत्र आदि के कितने ही वर्गों की शिविर श्रृंखला चली। पूज्यवर का सामीप्य, सान्निध्य एवं प्यार भरा मार्गदर्शन मिलता रहा। अगस्त 1961 से लेकर अगस्त 1967 तक नियमित पत्रों द्वारा व प्रत्यक्ष मार्गदर्शन मिला।

(इन्हीं पत्रों का संकलन 'पत्र पाथेय' पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुआ है)

14 सितंबर 1966 को गुरुदेव द्वारा लिखे गए पत्र की पंक्ति “इसके बाद आप तुरन्त मथुरा चले आयें और अपनी जिम्मेदारी अपने कंधों पर संभाल लें” ने हमें अंदर से आंदोलित कर दिया और क्रमशः जिम्मेदारियों को पूरा कर हम वर्ष 1967 में स्थाई रूप से मथुरा आ गए। उन्हीं दिनों गुरुदेव के मथुरा से विदाई लेने के पूर्व सारे देश में युगनिर्माण

पुस्तक पत्र पाथेय
पृष्ठ 165

दिनांक १४-१०-६६

हमारे आत्मस्वरूप,

आपका पत्र मिला । पढ़कर अन्तःकरण पुलकित हो आया । इतनी श्रद्धा और आत्मीयता किन्हीं बिरलों में ही देखी जाती है । ऋषियों में यही तत्व प्रधान रूप से विकसित होता है । आज के इस पथ भ्रष्ट संसार में ऐसे जीवित, जागृत आत्मा वाले व्यक्ति कदाचित ही कहीं देखने को मिलते हैं । आपको पाकर हम कितना बल अपने में अनुभव करते हैं, यह बात पत्र में लिखने की नहीं है ।

हम अपना स्थान खाली कर रहे हैं, उसकी पूर्ति आपको करनी है । गायत्री परिवार का बड़ा काम है । इसे अब तक हम संभालते रहे हैं, अब इसे आप संभालने वाले हैं । हमें आगे बहुत बड़ा काम करना है । इसलिए वर्तमान उत्तरदायित्व दूसरे कंधों पर जाना ही है । यह कंधे काफी मजबूत होने चाहिए । आप में वह मजबूती हम देख रहे हैं और अपने पीछे भी वैसा ही प्रकाश बना रहने के बारे में निश्चिन्त हैं ।

बच्चों को अपने पैरों पर खड़ा होने दें । जब तक उनके पर ठीक तरह उग न आवें तब तक उनकी देखभाल करना आवश्यक है । यह अवधि धैर्यपूर्वक पूरी करनी चाहिए । इसके बाद आप तुरन्त मथुरा चले आवें और अपनी जिम्मेदारी अपने कंधों पर संभाल लें ।

नवरात्रि का शिविर बहुत ही उत्साहपूर्वक चलेगा । किसी दिन आपको अवकाश मिल सके तो आना । संतोषीलाल जी भी आना चाहें तो उन्हें साथ लेते आना ।

आपका पता बदलवा दिया है । जो अंक नहीं पहुँचा है सो भेज रहे हैं । माता जी आपको आशीर्वाद लिखाती हैं ।

श्रीराम शर्मा

सम्मेलनों की होड़ चली हुईथी। हमें वह सौभाग्य मिला जब हम उनके सहयोगी के रूप में पूरे भारत का दौरा कर सके एवं परिवार के सभी सदस्यों से गुरुदेव के माध्यम से परिचित हो गए। सारे देश में जगह-जगह पूज्यवर के उद्बोधन सुने। उनकी निजी जीवन व्यवस्था की देखरेख की एवं ढेरों चमत्कार देखे,इतने अधिक कि यदि लिखें तो एक विश्वकोश बन जाएगा।

हमारे दो बेटे थे राम एवं सतीश दोनों अपने पैरों पर खड़े थे। पहले छोटे की, फिर बड़े की शादी विदाई सम्मेलन में ही तय हो गई। पूज्यवर मथुरा से इस अकिंचन पर तपोभूमि का दायित्व सौंप कर विदा हो गए। हमने यथासंभव उनका निर्देश पालन कर उनकी पादुकाओं को स्थापित कर सारा कार्य उन्हीं की शक्ति के संवाहक के रूप में संपादित किया। पूज्यवर हमें बीच-बीच में हरिद्वार बुलाकर निर्देश देते रहे। परम वंदनीय माताजी का मातृवत स्नेह हमें मिलता रहा। पूज्यवर के महाप्रयाण के बाद एक हम पर सबसे बड़ा वज्रपात तब हुआ जब हमारा बड़ा पुत्र राम 1991 में काल के क्रूर हाथों द्वारा छीन लिया गया। हमारी श्रद्धा डगमगाने लगी थी, किन्तु उपासना क्रम में गुरुदेव के जो निर्देश मिले उसी से हमें वह शक्ति मिली जो आज भी हमें प्राणवान् बनाए हुए है। देखते-देखते विधवा इंदिरा की भी सारी जिम्मेदारियाँ निबटती चली गयीं। गुरुसत्ता ने परोक्ष रूप से एवं परम वंदनीय माताजी ने प्रत्यक्ष रूप से हमें वह संबल दिया जिसने हमें जीवित रखा शक्ति दी एवं दिल के चार दौरों के बावजूद वह हिम्मत दी कि हम आज भी

उतना ही कार्य कर लेते हैं जितना कि अपनी डबरा या भरतपुर की उम्र में करते थे।

जो भी कुछ है उन्हीं का दिया हुआ है। ज्ञानयज्ञ को निरन्तर गतिशील करते रहने का सूक्ष्म संदेश सतत उपासना में मिलता रहता था तो निरन्तर उसी कार्य में लगे रहते हैं । महापूर्णाहुति में सम्मिलित होकर हमने परम पूज्य गुरुदेव के विराट् रूप को जाना-समझा। हम पर उनके जितने अनुदान हैं, उनके लिए कई जन्म लेने भी पड़ें तो वह ऋण उतारा न जा सकेगा।

हे प्रज्ञावतार, हमारे गुरुदेव, हमारी मातृसत्ता! शत शत नमन है तुमको

लीलापत शर्मा